International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 26-06-2021, Accepted: 11-07-2021, Published: 27-07-2021
Volume 3, Issue 3, 2021, Page No. 45-46

'वृद्ध विमर्श' के आइने में प्रेमचंद का कथा साहित्य

अर्चना शर्मा
एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, रामजस कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
प्रस्तुत शोध–आलेख का ध्येय "वृद्ध विमर्श" के सन्दर्भ में अनेक पारिवारिक–सामाजिक विसंगतियों पर प्रकाश डालना रहा है। शोध–आलेख के माध्यम से वृद्धावस्था से सम्बंधित अनेक पहलों एवं वर्तमान चुनौतियों को वाणी देने का प्रयास किया गया है। यह विषय वर्तमान दौर में प्रखर आवाज़ की माँग करता है अतः इस दिशा में यह शोध आलेख सात्विक प्रयास मात्र है।

मूल शब्दः वृद्ध विमर्श, वृद्धावस्था, जनसांख्यिकीय, संकीर्ण, यूथेनेसिया, लोकतंत्र

प्रस्तावना

'वसुधैव कुटंबकम्' के सूत्र वाहक एवं विश्व के सबसे शानदार लोकतंत्र में वृद्धावस्था को 'समस्या' के रूप में देखा जाना बेहद आहत करता है। विडंबना इतनी भयावह है कि 'घर के मुखिया' की गद्दी कब 'कमाऊ बच्चों' ने हथिया ली, मानों पता ही न चला। वास्तव में यह अत्यंत दुःखद स्थिति है।

यूएन वर्ल्ड पॉपुलेशन एजिंग रिपोर्ट (UN World Population Ageing) के अनुसार भारत की वृद्ध आबादी का वर्ष 2050 तक वर्तमान में लगभग 3 प्रतिशत से बढ़कर लगभग 20 प्रतिशत हो जाने का अनुमान है।

ऐसा अनुमान है कि वर्ष 2050 तक वृद्ध लोगों की संख्या में 326 प्रतिशत की वृद्धि होगी, जबकि इनमें 80 वर्ष एवं उससे अधिक आयु के लोगों की संख्या में 700 प्रतिशत की वृद्धि होगी। इस प्रकार ये भारत में सबसे तेज़ी से वृद्धि कर रहे आयु वर्ग होंगे।

एक ऐसे जनसांख्यिकीय परिदृश्य में, जहाँ वृद्ध आबादी की वृद्धि दर युवा आबादी की तुलना में कहीं अधिक है, ऐसे में वृद्धों को सम्मानपूर्ण, गुणवत्तापूर्ण व सहज सामाजिक परिस्थितियाँ प्रदान करना हमारा दायित्व है।

कालजयी साहित्यकार अपना दायित्व लेखनी द्वारा पूर्ण करता है। मुंशी प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में 'वृद्ध विमर्श' को बखूबी उकेरा है और महत्त्वपूर्ण सीख दी है। 'बूढ़ी काकी' कहानी का एक दृश्य दृष्टांत स्वरूप प्रस्तुत है –

"बूढ़ी काकी में जिह्वा–स्वाद के सिवा और कोई चेष्टा शेष न थी और न अपने कष्टों की ओर आकर्षित करने का रोने के अतिरिक्त दूसरा कोई सहारा ही। समस्त इंद्रियां, नेत्र, हाथ और पैर जवाब दे चुके थे।"[1]

प्रेमचंद का साहित्य अत्यंत व्यापक है। प्रेमचंद समाज के प्रत्येक तबके, आयु–वर्ग तथा अवस्था के व्यक्ति की समस्याओं को उठाते चलते हैं। एक तरफ़ पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव पड़ रहा है, दूसरी तरफ़ हम लोग अपने पारिवारिक–सांस्कृतिक मूल्यों को विस्मृत करते जा रहे हैं, जो हमारे व्यक्तित्व निर्माण में सहायक हैं। मुंशी प्रेमचंद ने अपनी कहानियों के माध्यम से इस समस्या को बीज रूप में चित्रित किया है।

जिस भारतवर्ष में 'मातृदेवो भवः पितृदेवो भवः' जैसी मूल्यपरक संस्कृति सर्वोपरि रही है, उस भारतीय पटल पर आज बुजुर्गों की दयनीय एवं असम्माननीय स्थिति विचारणीय हो गयी है।

मुंशी प्रेमचंद की कहानियाँ वृद्धों की स्थिति से रू–ब–रू कराती हैं।

"अम्माँ, तुम बरबस बात बढ़ाती हो। जिन रुपयों को तुम अपना समझती हो, वह तुम्हारे नहीं हैं, हमारे हैं। तुम हमारी अनुमति के बिना उनमें से कुछ नहीं ख़र्च कर सकतीं।"[2]

दरअसल .... प्रेमचंद अपनी इन कहानियों के माध्यम से वृद्धों की तत्कालीन स्थितियों को दर्शाकर युवा पीढ़ी को अवगत कराना चाहते हैं कि युवा चाहे उन्हें लाख बेकार समझें बुजुर्ग हमेशा उनका साथ देते हैं तथा उनका मार्गदर्शन करना चाहते हैं।

प्रेमचंद द्वारा रचित 'बेटों वाली विधवा' शीर्षक कहानी में वृद्ध–विमर्श के अनभिज्ञ पहलुओं को उकेरने का प्रयास किया है। जिसमें वैधव्य को प्राप्त स्त्री को अस्तित्वहीन मानने की प्रथा प्रचलित है। ऐसी स्त्रियों को न सिर्फ़ परिवार के सदस्य अपितु सामाजिक लोग भी उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। क्षण भर में उनके सारे अधिकार व प्रतिष्ठा छीन ली जाती है।

'पंच परमेश्वर' कहानी को स्मरण करें, जिसमें जुम्मन शेख की खाला के अधिकारों का हनन होता है। एक तो स्त्री, दूजा बुढ़ापा; इसी कारण से बूढ़ी खाला को भी अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना पड़ता है। इस कहानी को लिखे 100 वर्ष से अधिक समय व्यतीत हो चुका है। 1916 में इसे लिखा गया था। यह आज भी जीवंत बनी हुई है। जिस प्रकार डोर से कटी पतंग सहारा ढूंढती है, उसी तरह वृद्ध भी अपने आप में टूटकर सहारे के आकांक्षी हो जाते हैं और जो उन्हें सहारा देता है, उस पर अपना सर्वस्व लुटाकर उसकी अधीनता इस आशा से स्वीकार लेते हैं कि वह भी उनके प्रति उसी तरह आभारी बना रहेगा। किंतु संपत्ति–लोभ मनुष्य को संकीर्ण एवं स्वार्थी बना देता है। जहाँ एक ओर बूढ़ी काकी अपनी संपत्ति अपने भतीजे बुद्धिराम को दे देती है, वहीं दूसरी ओर खाला भी अपनी संपत्ति जुम्मन शेख को वसीयत कर देती है। परिणामतः दोनों भर–पेट भोजन के लिए भी तरस जाती हैं:

"बेटा! तुम्हारे साथ मेरा निर्वाह न होगा। तुम मुझे रुपये दे दिया करो, मैं अपना खा–पका लूँगी।"[3]

प्रेमचंद ने भी दिखाया है कैसे युवाओं का विवेक खो जाता है और उनका विवेकहीन मस्तिष्क कड़वे एवं अमर्यादित शब्दों के प्रयोग को नहीं रोक पाता है –

"बुढ़िया न जाने कब तक जिएगी। दो–तीन बीघे ऊसर क्या दे दिया, मानों मोल ले लिया। बघारी दाल के बिना रोटियां नहीं उतारती। जितना रुपया इस पेट में झोंक चुके, उतने से तो अब तक गाँव मोल ले लेते।"[4]

मेरा मत है कि जीवन भर की व्यस्तता बुढ़ापे में आराम खोजती है। इसे सम्मानपूर्ण बनाना व्यक्तिगत प्रयास नहीं, सामूहिक ध्येय होना चाहिए। 'मनुस्मृति' में भी इस बात का प्रमाण मिलता है कि बुजुर्गों का नित्य आशीर्वाद लेने एवं उनकी सेवा करने से आयु, विद्या, यश और बल इन चार गुणों में वृद्धि होती है –

"अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्यायशोबलम्।।"
– (मनुस्मृति, 2/121)

बुजुर्गों का आशीर्वाद आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। अतः आज की युवा पीढ़ी को उनका सम्मान करना चाहिए न कि सिर्फ़ इस्तेमाल। साथ ही, युवा वर्ग को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि वे भारतवर्ष के उसी गौरव कुल के वंशज हैं, जिसमें बुजुर्गों का स्थान सर्वोपरि एवं आदरणीय है।

निष्कर्ष

अस्तु; हमें स्मरण रखना चाहिए कि जिस प्रकार नदियाँ पर्वतों से निकलते समय चंचल, ढलानों पर गिरते समय उन्मादी एवं समतल पर आते–आते मंद पड़ जाती हैं, उसी प्रकार जीवन की अवस्थाएँ भी परिवर्तित होती हैं। यह भी विस्मृत नहीं करना चाहिए कि जिस प्रकार बालक सामाजिक चिंताओं से मुक्त भोजन का अभिलाषी होता है, उसी प्रकार वृद्धों में भी अमूमन सभी अभिलाषाओं से परे जिह्वा स्वाद की अभिलाषा विशेष हो जाती है। इसकी पूर्ति न होने पर उसकी दुर्बलता रोने–कुढ़ने तक को विवश करती है। ऐसे में जब–जब समाचार पत्रों में वृद्ध समाज हेतु कष्टहीन मौत (यूथेनेसिया) प्रदान करने के धंधे को मान्यता प्रदान करने की मांग तथाकथित औद्योगिक समाज में उठती है तो दुःख होता है। मुंशी प्रेमचंद ने प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप में 'बूढ़ी काकी', 'बेटो वाली विधवा', 'पंच–परमेश्वर' के अतिरिक्त 'ईदगाह', 'अलग्योझा', 'नमक का दरोगा' सम कहानियों में वृद्धावस्था के संदर्भ में प्रासंगिक प्रश्न खड़े कर दिए हैं। हमें स्वयं इन प्रश्नों के समय रहते हल ढूंढने होंगे चूँकि अनुभवी वर्ग को दरकिनार करना अभिशाप साबित होगा। धर्मवीर भारती के शब्दों में – "मैं रथ का टूट पहिया हूँ। लेकिन मुझे फेंको मत। इतिहासों की सामूहिक गति/सहसा झूठी पड़ जाने पर/क्या जाने/सच्चाई टूटे पहियों का आश्रय ले।"

संदर्भ सूची

1. मानसरोवर (भाग–8) रूरू प्रेमचंद रू संस्मरण रू 2011, अनुपम प्रकाशन, पटना, पृष्ठ–99
2. मानसरोवर (भाग–1) रूरू प्रेमचंद रू संस्मरण रू 2011, अनुपम प्रकाशन, पटना, पृष्ठ–55
3. मानसरोवर (भाग–7) रूरू प्रेमचंद रू संस्मरण रू 2011, अनुपम प्रकाशन, पटना, पृष्ठ–99
4. वही, पृष्ठ–98